हिंदी डी सी -1

सेमेस्टर-I

प्रश्न पत्र- I, हिंदी साहित्य का इतिहास

अध्याय: भक्ति आंदोलन के उदय की पृष्ठभूमि

अध्याय लेखक: नीरज

कॉलेज / विभाग : तदर्थ प्रवक्ता, भारती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

- **भक्ति आंदोलन के उदय का ऐतिहासिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य**
- **भक्ति आंदोलन के उदय संबंधी विविध मत**
- **भक्ति आन्दोलन की प्रमुख शाखाएँ**
- **भक्ति आंदोलन का धार्मिक पक्ष**
- **उपसंहार**
- **स्व-मूल्यांकन प्रश्नमाला**
- **सन्दर्भ ग्रंथ-सूची**

- **विषय प्रवेश :**

हिंदी साहित्य के इतिहास अध्ययन के इस पाठ में हम उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन के उदय के कारणों पर विचार करेंगे. साथ ही, हम यह भी जानेंगे कि भक्ति आन्दोलन के उदय का वैचारिक आधार क्या है. इस पूरी वैचारिक पृष्ठभूमि में आचार्य रामचंद्र शुक्ल और आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतों का विश्लेषण भी करेंगे और भक्ति आन्दोलन से प्रकाश में आये विविध सम्प्रदायों पर एक संक्षिप्त दृष्टि भी डालेंगे. अंत में यह देखने का प्रयास किया जायेगा कि भक्ति आन्दोलन आखिर धर्म का आवरण लेकर ही जनता के मध्य क्यों अवतरित हुआ और क्या वाकई में *'धर्म का प्रवाह कर्म, ज्ञान और भक्ति इन तीनों धाराओं में' (हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृष्ठ -34)* में चलता है.

- **भक्ति आंदोलन के उदय का ऐतिहासिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य :**

भारतीय इतिहास का मध्यकाल कई मायनों में महत्वपूर्ण परिवर्तनों का काल रहा है. यह परिवर्तन न केवल राजनीति बल्कि समाज, संस्कृति, कलाओं और साहित्य इत्यादि के क्षेत्र में भी बहुत असरकारी रहा है. सच कहा जाए तो जिसे युग परिवर्तक कहा जाता है, वह यही समय है. मुग़ल सल्तनत भारत में स्थापित हो गया और इस्लाम के आने और फैलने के साथ-साथ हिन्दू-मुस्लिम जनता के बीच आपसी सौहार्द, सद्भाव, सामाजिक और सांस्कृतिक संपर्क भी बढ़ा. यही वह समय है, जब समाज के हाशिये से उठकर संत कवि मुख्य धारा में अपनी वाणियों के साथ आये, जिनमें ऊँच-नीच और जाति-पाती के भेद का नकार था. उन्होंने धार्मिक कट्टरवाद का भी मुखर विरोध किया. सामाजिक तौर पर इतने बड़े पैमाने पर बदलाव के आने के पीछे एक बड़े वैचारिक पृष्ठभूमि का होना स्वाभाविक था, क्योंकि सामाजिक तौर पर ऐसा प्रखर स्वर एक दिनी विचार प्रक्रिया की उपज नहीं हो सकता, न था. आम जनता के लिए शंकराचार्य का ज्ञान मार्ग और अद्वैतवाद बहुत सहज और सरल नहीं रह गया था. भक्ति आन्दोलन सामाजिक जड़ता से निकलने की बेचैनी से उपजा आन्दोलन था, जो अपने सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों से उपजा लोक का, आमजन का अपना आन्दोलन था. इसीलिए मध्य काल का यह आंदोलन अपने मूल रुप में एक धार्मिक-सांस्कृतिक आंदोलन है.

के. दामोदरन अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'भारतीय चिंतन परंपरा' में भक्ति आंदोलन के उदय पर बात करते हुए लिखते हैं - *"भक्ति आन्दोलन उस समय आरम्भ हुआ था, जब हिन्दू और मुसलमान पुरोहितों और उनके द्वारा समर्पित और समृद्ध किये गए निहित स्वार्थों के खिलाफ संघर्ष एक*

ऐतिहासिक आवश्यकता बन गया था. जनता को, जो अब तक क्षेत्रीय और स्थानीय निष्ठाओं से आबद्ध थी और युगों पुराने अन्धविश्वास और दमन-शोषण के बावजूद हतोत्साह नहीं हुई थी, जगाया जाना और अपने हितों तथा आत्म-सम्मान की भावना के लिए उसे एक किया जाना आवश्यक था. स्थानीय बोलियों और क्षेत्रीय भाषाओँ को, एकता स्थापित करने वाली राष्ट्र भाषाओँ के स्तर पर उठाना था."(देखें, पृ. 328). इस आंदोलन के चरित्र पर दामोदरन आगे भी लिखते हैं - *"भक्ति आंदोलन ने देश के भिन्न-भिन्न भागों में, भिन्न-भिन्न मात्राओं में तीव्रता और वेग ग्रहण किया. यह आंदोलन विभिन्न रूपों में प्रकट हुआ. किन्तु कुछ मूलभूत सिद्धांत ऐसे थे, जो समग्र रूप से पूरे आन्दोलन पर लागू होते थे - पहले, धार्मिक विचारों के बावजूद जनता की एकता को स्वीकार करना; दूसरे, ईश्वर के सामने सबकी समानता; तीसरे, जाति प्रथा का विरोध; चौथे, यह विश्वास कि मनुष्य और ईश्वर के बीच तादात्मय प्रत्येक मनुष्य के सद्गुणों पर निर्भर करता है, न कि उसकी ऊँची जाति अथवा धन-सम्पति पर; पांचवे, इस विचार पर जोर कि भक्ति ही आराधना का उच्चतम स्वरुप है; और अंत में कर्मकांडों, मूर्तिपूजा, तीर्थाटनों और अपने को दी जाने वाली यंत्रणाओं की निंदा. भक्ति आन्दोलन मनुष्य की सत्ता को सर्वश्रेष्ठ मानता था."(देखें, वही, पृ. 330).*

मनुष्य की सत्ता को सर्वोपरि मानने वाले इस आन्दोलन का यही दृष्टिकोण इसे अन्य सभी आन्दोलनों से आगे खड़ा करता है. भक्ति आन्दोलन के उदय पर इतिहासकारों ने और खासकर साहित्येतिहासकारों ने विस्तार से लिखा है. यद्यपि उनमें पर्याप्त मतवैभिन्य हैं. यह मात्र भक्ति और भगवद भजन वाला सामान्य आन्दोलन नहीं था. बल्कि इससे कहीं आगे जातिगत, सामाजिक-धार्मिक कुरीतियों से मुक्ति की छटपटाहट से उपजा लोक और लोक भाषाओँ के जागरण का काल था. के. दामोदरन ने भक्ति आन्दोलन के इसी पक्ष की व्याख्या करते हुए तर्क दिया है *"भक्ति आन्दोलन का मूल आधार भगवान विष्णु अथवा उनके अवतारों, राम और कृष्ण, की भक्ति थी. किन्तु, यह शुद्धतः एक धार्मिक आन्दोलन नहीं था. वैष्णवों के सिद्धांत मूलतः उस समय व्याप्त सामाजिक-आर्थिक यथार्थ की आदर्शवादी अभिव्यक्ति थे. सांस्कृतिक क्षेत्र में, उन्होंने राष्ट्रीय नवजागरण का रूप धारण किया; सामाजिक विषयवस्तु में वे जाति-प्रथा के आधिपत्य और अन्यायों के विरुद्ध अत्यंत महत्वपूर्ण विद्रोह के द्योतक थे. इस आन्दोलन ने भारत में विभिन्न राष्ट्रीय इकाईयों के उदय को नया बल प्रदान किया, साथ ही राष्ट्रीय भाषाओँ और उनके साहित्य की अभिवृद्धि का मार्ग भी प्रशस्त किया."(देखें, वही, पृ.327).* जहाँ तक हिंदी

साहित्य में भक्ति आन्दोलन की बात है, तो यहाँ भक्ति आन्दोलन की मुख्यतः दो अवधारणाएँ देखने में आती है. जिनमें आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेद प्रमुख हैं, पर इन दोनों अवधारणाओं पर विचार करने से पहले इस प्रसिद्ध उक्ति को भी ध्यान में रखना जरुरी है -

"भक्ति द्राविड़ उपजी लाये रामानंद

प्रगट करी कबीर ने सप्तद्वीप नवखंड"

लोक प्रसिद्ध इस उक्ति का सन्दर्भ सभी इतिहासकारों ने कई सन्दर्भों में सही माना है. इतिहासकार सतीश चन्द्र लिखते हैं *"उत्तर भारत में 14वीं-15वीं सदियों में जो जनवादी भक्ति आन्दोलन शुरू हुआ, उसे अक्सर दक्षिणी आन्दोलन की ही एक प्रशाखा माना गया."(देखें, चन्द्र, सतीश,मध्यकालीन भारत, सल्तनत से मुग़ल काल तक, दिल्ली सल्तनत 1206-1526, पृ.-259.)* यह ज्ञात तथ्य है कि मध्यकाल का भक्ति आन्दोलन सबसे पहले दक्षिण भारत से ही आलवार भक्तों के द्वारा शुरू हुआ. आचार्य शुक्ल भी भक्ति आंदोलन को दक्षिण से ही आने वाली एक धारा माना है. उन्होंने लिखा है *"भक्ति का जो सोता दक्षिण की ओर से धीरे-धीरे उत्तर भारत की ओर पहले से ही आ रहा था, उसे राजनीतिक परिवर्तन के कारण शून्य पड़ते हुए जनता के हृदय क्षेत्र में फैलने के लिए पूरा स्थान मिला."(हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.54) 'इस रूप में वे सामान्यजन में प्रचलित उक्ति 'भक्ति द्रविड़ उपजी, लाये रामानंद' का वैदुषिक स्तर पर समर्थन करते हैं.' (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ. 30.)*

भक्ति के उद्भव के सबसे अधिक प्रमाण ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद में उपलब्ध होते हैं. डॉ बेनी प्रसाद ने अपनी पुस्तक 'हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता में' स्पष्ट किया है "भारतीय भक्ति संप्रदाय का आदि स्रोत ऋग्वेद है. इसके कुछ मन्त्रों में मनुष्य और देवताओं के बीच गाढे प्रेम और मैत्री भाव की कल्पना की गई है". भक्ति आन्दोलन के प्रवाह की और संकेत करते हुए श्रीमदभागवत महात्म्य में कहा गया है कि

"उत्पन्ना द्राविडे साहं वृद्धिं कर्नाटके गता"

क्वाचित क्वाचित महाराष्ट्र गुर्जर जीर्णतांगता

वृन्दावनं पुनः प्राप्य नवीनैव सरूपिणी

जातां युवती सम्यक श्रेष्ठ रूपा तु साम्प्रतं ॥"

इस उद्धरण और ऊपर के भक्ति द्राविड़ उपजे दोनों उद्धरणों से स्पष्ट है कि भक्ति का उदय द्रविड़ देश में उदय हुआ, तमिलनाडु में हुआ. परन्तु इस तथ्य से आगे दोनों उद्धरण दो तरह का संकेत देते हैं. श्रीमदभागवद का श्लोक बताता है कि भक्ति के आगे का विकास कर्णाटक और फिर धीरे धीरे महाराष्ट्र में हुआ. उसका पतन गुजरात देश में हुआ. फिर वृन्दावन में उसे पुनर्जीवन प्राप्त हुआ हिंदी की अनुश्रुति भक्ति के दक्षिण से रामानंद द्वारा लाये जाने और उत्तर में कबीर द्वारा प्रसारित किये जाने का संकेत करती है. ज्ञातव्य है कि संस्कृत की उक्ति कृष्ण भक्ति की ओर संकेत करती है परन्तु हिंदी की अनुश्रुति का संकेत रामभक्ति की ओर है. इसके ऐतिहासिक सर्वेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि अपने आरंभिक दौर में जहाँ तक आलवारो का संबंध है कृष्ण की भक्ति पर अधिक बल देते हुए भी व्यावहारिक रूप से राम और कृष्ण में कोई भेद नहीं मिलता है. आलवारों और नयनारों ने भक्ति का उपयोग दक्षिण भारत में जैनियों और बौद्धों को भागने के लिए किया. दक्षिण भारत में भक्ति के जो रूप दिखाई देते हैं उनमें पहला वैष्णव संप्रदाय की भक्ति का है जिसमें राम और कृष्ण से सम्बंधित सम्प्रदाय भी मिला हुआ है. इसका रूप आलवारों से होता हुआ रामानुजाचार्य, रामानंद, वल्लभाचार्य, मध्वाचार्य और विष्णुस्वामी जैसों के द्वारा आगे तक हुआ. दूसरी भक्ति की शाखा शैवों की थी. जो नयनारों के बीच विकसित होती रही. तीसरी शाखा बौद्धों और जैनों को मार भगाने के बाद वैष्णवों और शैवों के मध्य उत्पन्न हुए भेड़ों को दूर करने के लिए समन्वयात्मक रूप लेकर आयी. इसकी एक कड़ी कर्नाटक के पुंडलिक थे. स्पष्ट है कि भक्ति दक्षिण से चलकर कर्णाटक महाराष्ट्र और गुजरात से होती हुई उत्तर के ब्रज प्रदेश में पहुँची.

महाराष्ट्र में संत तुकाराम, नामदेव जैसे भक्त तथा वक्री सम्प्रदाय और महानुभाव सम्प्रदाय ईसा की 15वीं सदी में उत्पन्न हुए. गुजरात में नरसी मेहता जैसा भक्त कवि हुआ. आलवारों की भक्ति प्राचीन है. आरंभिक आलवारों को विष्णु के गदा, शंख और नंदक का अवतार माना जाता है. आलवारों की संख्या 12 मानी गयी है इनमें अंतिम तिरुपाणि हैं इसी में अंडाल नामक महिला भी है. अंडाल के भक्ति गीतों में प्रेम लक्षणा भक्ति का गहरा पुट है जो वैष्णव भक्ति का भाव कांता भाव या उज्जवल रस से परिपूर्ण है .तमिलों का भक्ति आन्दोलन ब्राह्मण धर्म की प्रभु सत्ता के विरुद्ध खड़ा हुआ. कर्नाटक के वीरशैव /लिंगायत भी उसी वर्ग के विरुद्ध जाति-पाति के विरोध में भक्ति का सहारा लेते दिखाई पड़ते हैं.

भक्ति आन्दोलन को शास्त्रीय निकष प्रदान करने का प्रयास दसवीं शताब्दी में और अधिक हुआ. शंकराचार्य ने अद्वैतवादी सिधांत का प्रचार किया और इनके इस मत को ना स्वीकार करने वाले रामानुजाचार्य,निम्बार्काचार्य,मध्वाचार्य ,विष्णुस्वामी एवं वल्लभाचार्य ने भक्ति के लिए नया मार्ग खोजा . मध्यकालीन भक्ति का जो स्वरुप संस्कृत और भारतीय भाषाओं में विकसित हुआ उसका श्रेय इन्ही आचार्यों को है.इन दार्शनिकों के मत में भेद है परन्तु एक बात से सब सहमत हैं,वह है मायावाद का विरोध और भगवान् के अवतारवाद का गुणगान करना.

इस अखिल भारतीय भक्ति आन्दोलन की लौ दक्षिण में निम्बार्काचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य, रामानुजाचार्य, पश्चिम में मीरांबाई, एकनाथ, तुकाराम, रामदास, नरसी मेहता, उत्तर में रामानंद, कबीरदास, गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास, गुरुनानक देव(सिख धर्म), रैदास, दादू, बंगाल में चैतन्य महाप्रभु, असम में शंकरदेव इत्यादि भक्तों/संतों/कवियों के विचारों से पनपकर, पुष्पित और पल्लवित हुई.

भक्ति आंदोलन के उदय संबंधी विविध मत :

भक्ति आंदोलन के उदय की व्याख्या संबंधी तर्कों में पर्याप्त विभिन्नता है. यह भी कारण हो कि यह हिंदी साहित्य के सर्वाधिक चर्चित और विवादास्पद प्रसंग के रूप में हमारे सामने आता है. तमाम वैचारिक मतभेदों के बावजूद लगभग सभी इतिहासकारों ने भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में यह अवश्य माना है कि यह सर्वप्रथम दक्षिण में आलवार संतों के यहाँ उत्पन्न हुई. 12वीं शताब्दी में दक्षिण से उत्तर की ओर यह रामानंद द्वारा आई. 'भक्ति द्रविड़ उपजी, लाये रामानंद' इस बात की पुष्टि भी करता है. जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि शंकराचार्य का 'अद्वैतदर्शन' आम जनता के लिए सुगम नहीं रह गया था. अद्वैतदर्शन के परिणामस्वरुप दक्षिण में इसी के विरोध में वैष्णव संतों ने 12वीं सदी 'विशिष्टाद्वैतवाद (रामानुजाचार्य)

चित्र : साभार, भारतकोश
http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9A%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0:Ramanujacharya.jpg
रामानुजाचार्य के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें:
http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A5%81%E0%A4%9C%E0%A4%BE%E0%A4%9A%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF,

13वीं सदी में 'द्वैतवाद'(मध्वाचार्य)

चित्र : साभार, भारतकोश लिंक :
http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9A%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0:Madhvacharya.jpg
मध्वाचार्य के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ पर क्लिक करें :
http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%AE%E0%A4%A7%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%9A%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF

इसी सदी में विष्णुस्वामी का 'शुद्धाद्वैतवाद' तथा 'द्वैताद्वैत' की स्थापना की. इन सभी संतों का यह मूल ध्येय था कि ज्ञान के साथ भक्ति का तादात्मय स्थापित हो सके.

भक्ति आन्दोलन के उदय का संबंध कुछ विचारक भारतीय तत्वों से तो कुछ अभारतीय तत्वों से स्वीकार करते हैं. अभारतीय तत्वों से स्वीकार करने वालों में से जॉर्ज ग्रियर्सन, मैक्सवेल और कीथ का नाम उल्लेखनीय है. साहित्येतिहास में भक्ति आन्दोलन को विदेशी प्रभाव का परिणाम मानते हुए जॉर्ज ग्रियर्सन ने लिखा है *"बिजली की चमक के समान अचानक इस समस्त पुराने धार्मिक मतों में अन्धकार के ऊपर एक नयी बात दिखाई दी. कोई हिन्दू यह*

नहीं जानता कि यह बात कहाँ से और कोई भी इसके प्रादुर्भाव का काल निश्चित नहीं कर सकता" (समेकित भारतीय साहित्य : डॉ० नगेन्द्र). जॉर्ज ग्रियर्सन अपने लेख में भक्ति के उद्भव को ईसाइयत की दें ठहराते हुए यह मानते हैं कि प्राचीन काल में ईसाईयों की एक बस्ती मद्रास प्रान्त में थी. इसी के प्रभाव से भक्ति मार्ग आया. और बाद में समस्त भारत में फ़ैल गया. ग्रियर्सन ईसाइयत के प्रभाव का कारण प्रपत्ति भाव मानते हैं. यह प्रपत्ति भाव भारत में आलवारों की रचना में दिखाई देता है. आलवारों की रचनाये सिद्ध करती हैं कि भक्ति का रूप ईसाइयत की देन न होकर भारतीय चिंता का स्वाभाविक विकास है. हालाँकि ग्रियर्सन के तर्क को बाद के लगभग सभी इतिहासकारों ने नकार दिया है. उनका मत दरअसल उनकी औपनिवेशिक मानसिकता से उपजी हुई लगती है. ग्रियर्सन से उपजी हुई भ्रांत धारणा की पुष्टि प्रो० एच०एच० विल्सन ने अपनी पुस्तक हिन्दू रिलिजन में की है. पाश्चात्य विद्वान बेवर ने तो कृष्ण को क्राइस्ट का रूपांतरण हि ठहरा दिया इससे यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की अनेक भ्रांत धरनों के पीछे ईसाइयत धर्म की प्रतीष्ठा का सवाल जुड़ा हुआ है

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अपने इतिहासग्रंथ 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में यह स्थापना देते हैं कि *"जब मुस्लिम साम्राज्य दूर-दूर तक स्थापित हो गया, तब परस्पर लड़ने वाले स्वतंत्र राज्य नहीं रह गए. इतने भारी उलट-फेर के पीछे हिन्दू जनसमुदाय पर बहुत दिनों तक उदासी छाई रही. अपने पौरूष से हताश जाति के लिए भगवान् की भक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था."(देखें, पृ.)* इसके ठीक विपरीत हजारीप्रसाद द्विवेदी शुक्ल जी की इस स्थापना से अलग लिखते हैं *"यह भी बताया गया है कि जब मुसलामान हिन्दुओं पर अत्याचार करने लगे तो निराश होकर हिन्दू लोग भगवान का भजन करने लगे. यह बात अत्यंत उपहास्यास्पद है. जब मुसलमान लोग उत्तर भारत में मंदिर तोड़ रहे थे, उसी समय अपेक्षाकृत निरापद दक्षिण में भक्त लोगों ने भगवान की शरणागति की प्रार्थना की. मुसलामानों के अत्याचार के कारण यदि भक्ति की भावधारा को उमड़ना था, तो पहले उसे सिंध में और फिर उत्तर भारत में प्रकट होना चाहिए था, पर वह हुई दक्षिण में."(देखें, हिंदी साहित्य कि भूमिका, हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.)* द्विवेदी जी आगे लिखते हैं *"अगर इस्लाम नहीं आया होता तो भी इस साहित्य का बारह आना वैसा ही होता जैसा आज है." (देखें, वही, पृ.2)* इन दोनों ही स्थापनाओं से परे रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं *"भक्ति-काल के उदय की इस व्याख्या में अंतर का प्रमुख कारण रामचंद्र शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी के बीच इतिहास-दृष्टि का फरक है. शुक्ल के*

लिए समाज अपने सभी वर्गों के साथ, जिसे वे समष्टि रूप में 'जनता' कहते हैं, साहित्यिक परिवर्तन और विकास के लिए जिम्मेदार है, द्विवेदी इसके लिए प्रमुख कारक 'लोक' को मानते हैं, जो समाज का अपेक्षया पिछड़ा वर्ग है.....समाज के सभी वर्गों की क्रिया-प्रतिक्रिया पर ध्यान रखने के कारण रामचंद्र शुक्ल के लिए इस्लाम का आगमन उनके विवेचन में गुणात्मक महत्त्व रखता है, जबकि हजारीप्रसाद द्विवेदी लोक को केंद्र में रखते हैं, जहाँ इस्लाम का प्रभाव और उसके लिए क्रिया-प्रतिक्रिया उतना महत्त्व नहीं रखती; वह केंद्र में हाशिए पर है, रुपये में बारह आना (आज का पचहत्तर पैसा) नहीं, चार आना हो तो हो."(हिंदी साहित्य संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ.34) उधर हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास में बच्चन सिंह लिखते हैं *"इसमें कोई संदेह नहीं कि मुसलमान आक्रमणकारियों ने मंदिर तोड़े; हिन्दू जनता पर अत्याचार किये और लोगों को बलात मुसलमान बनाया. यह भी नि:संदिग्ध है कि गुरु नानकदेव को छोड़कर किसी भक्त कवि ने मुसलमानों के विरोध में कुछ नहीं लिखा;"* बच्चन सिंह आगे लिखते हैं *"शुक्ल जी के कथन को पूर्णतः मान लेने पर भक्तिकाल खंडित हो जायेगा. संत काव्य और सूफी काव्य उनके सैद्धांतिक दायरे से बाहर हो जायेंगे. द्विवेदीजी का कथन भी अर्द्धसत्य ही है. यदि मुसलमान न आये होते तो न संत काव्य लिखा जाता और न सूफी काव्य. क्षितिमोहन सेन और इतिहासकार ताराचंद ने स्पष्ट रूप से संत कवियों पर सूफियों के प्रभाव को स्वीकार किया है."(हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, बच्चन सिंह, पृ. 77)* भक्ति आन्दोलन में सूफी कवि, जो मुसलमान ही थे, दो संस्कृतियों के बीच की बढती वैमनष्यता की खाई को पाटने की कोशिश कर रहे थे. दूसरी ओर यही काम निर्गुण संत कवि कर रहे था. इन संत कवियों का आगमन निम्न कही जाने वाली जातियों से हुआ था और जिन्होंने अपनी क्रांतिकारी आवाज़ से मौलवी-पंडों, सामाजिक भेदभाव दोनों को दुत्कारा. इस क्रांति की मशाल कबीर के नेतृत्व में जल रही थी. *"कहना न होगा कि निर्गुण भक्ति धारा का अजस्र प्रवाह हिंदी प्रदेश में ही देखा गया. अत्यंत सामान्य वर्ग के हिन्दू-मुसलामानों ने अपने गीत गाये. इतिहास में संभवतः पहली बार इस वर्ग ने आत्माभिव्यक्ति का अवसर पाया और अपनी वाणी को जनता तक निर्भीकतापूर्वक पहुँचाया. लेकिन निम्न वर्ग के लोग इस व्यवस्था के विरुद्ध कैसे खड़े हो गए, इसकी पड़ताल के लिए इतिहास के आर्थिक पहलू पर विचार करना होगा.....श्रम-विभाजन के फलस्वरूप नयी जातियों का जन्म हुआ. जाति-पाती के बंधन को धक्का लगा...कबीर, रैदास, दादू आदि इसी व्यवसाय और जाति के लोग थे. इन्होंने वेद-कितेब (कुरान) को अस्वीकार करके हिन्दुओं-मुसलमानों के लिए एक सामान्य मार्ग निकाला...सामंतवाद के विरुद्ध दूसरा आन्दोलन सूफियों*

का था...सूफियों ने संतों की तरह किताब को अस्वीकार नहीं किया. वे उलमा, क़ाज़ी आदि की कुरआन की गलत व्याख्याओं के विरुद्ध थे...सूफी सभी धर्मों में मूलभूत तात्विक एकता के पक्षधर थे."(देखें वही, पृ.78) उत्तर भारत का भक्ति आन्दोलन सगुण-निर्गुण, सूफियों के समन्वय से निर्मित और विकसित होता है. यह इस मायने में भी विशिष्ट है कि जो भक्ति आंदोलन दक्षिण से अविरल धरा के रूप में इतिहास के विकास-क्रम में उत्तर में फैला, उसे विपरीत स्थितियों से अधिक टकराना पड़ा. इसका कारण यह था कि इधर का राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक परिदृश्य दक्षिण से अधिक दुरूह और जटिल था. इसने न केवल परंपरागत ढाँचे में बुनियादी और सार्थक परिवर्तन किया बल्कि इसका प्रवेश नीचेल तबके के जनता तक भी हो सकता. आंडाल से शुरू हुई स्त्री भागीदारी इधर मीरांबाई तक प्रकट हुई. इस आन्दोलन ने भक्ति काव्य और साहित्य से हिंदी का रसात्मक संवाद स्थापित किया. हिंदी साहित्येतिहास में किसी भी काल-विशेष या आन्दोलन ने इतने व्यापक स्तर पर अपना प्रभाव नहीं छोड़ा था. यह भक्ति आन्दोलन ही था, जिसने शास्त्र से लोकभाषा की ओर, उच्च सामंती परिवेश से जनता की ओर, रुढियों से परंपरा की ओर करवट ली और भारतीय जातीय साहित्य की नींव डाली, जिसकी बुनियाद पर आज का भारतीय धर्मनिरपेक्ष समाज की ईमारत बुलंद है.

भक्ति आन्दोलन की प्रमुख शाखाएँ :

भक्तिकालीन सम्प्रदायों और मतों की बात करें तो इनकी संख्या दर्जन भर से ऊपर हो जाएगी. सबसे महत्ववपूर्ण बात यह कि इन सभी सम्प्रदायों/मतों के मानने वालों की संख्या बहुत रही है. मोटे तौर पर शाखाओं की बात की जाये तो दो शाखा ही प्रधानतः ठहरती है.

(क). सगुण - रामाश्रयी, कृष्णाश्रयी.

(ख). निर्गुण - ज्ञानमार्गी, प्रेममार्गी.

सगुण धारा के अंतर्गत रामाश्रयी काव्यधारा, जिसमें विष्णु के अवतार राम को आधार बनाकर काव्य रचना की गई और दूसरा कृष्णाश्रयी काव्यधारा, इसमें भी विष्णु के अवतार कृष्ण को केंद्र में रखकर लीलापद रचे गए. रामाश्रयी परंपरा के बड़े कवि तुलसीदास हैं. उन्होने रामचरितमानस की रचना की, जो जिसकी लोकप्रसिद्धि कल्पनातीत है. गोस्वामी तुलसीदास इतने बड़े कवि हैं, जिनके प्रभाव से आधुनिक कवि भी नहीं बच पाए. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने अपनी एक लंबी

कविता 'तुलसीदास' शीर्षक से लिखी है. वहीँ कृष्णाश्रयी धारा के बड़े नाम सूरदास और मीराबाई हैं. इनके अलावा नंददास, कृष्णदास, कुंभनदास, परमानंददास, गोविंदस्वामी, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी (सभी 16वीं शताब्दी) इत्यादि प्रमुख कृष्ण भक्त कवि हैं.

तुलसीदास 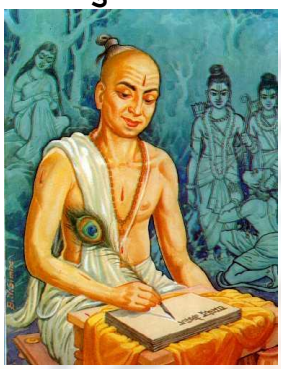	स्रोत : साभार, भारत कोश http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9A%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0:Tulsidas.jpg तुलसीदास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%B2%E0%A4%B8%E0%A5%80%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8
सूरदास 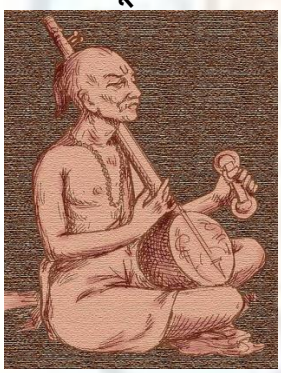	स्रोत : साभार, भारत कोश http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9A%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0:Surdas.jpg सूरदास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/सूरदास
मीरांबाई 	स्रोत : साभार, भारत कोश http://bharatdiscovery.org/w/index.php?title=%E0%A4%9A%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0:Meerabai-1.jpg&filetimestamp=20110318125038 मीरांबाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%AE%E0%A5%80%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%AC%E0%A4%BE%E0%A4%88

नंददास **चित्र उपलब्ध नहीं**	नन्ददास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/नंददास
कृष्णदास **चित्र उपलब्ध नहीं**	कृष्णदास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%95%E0%A5%83%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%A3%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8
कुंभनदास 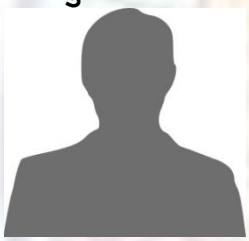 **चित्र उपलब्ध नहीं**	कुंभनदास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%95%E0%A5%81%E0%A4%AE%E0%A5%8D%E0%A4%AD%E0%A4%A8%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8
परमानंददास **चित्र उपलब्ध नहीं**	परमानंददास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%82%E0%A4%A6_%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8
गोविंदस्वामी **चित्र उपलब्ध नहीं**	गोविन्दस्वामी के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%97%E0%A5%8B%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%82%E0%A4%A6%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%80

चतुर्भुजदास 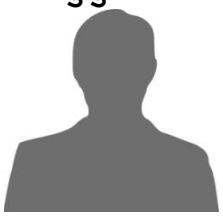 **चित्र उपलब्ध नहीं**	चतुर्भुजदास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9A%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AD%E0%A5%81%E0%A4%9C%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%B8
छीतस्वामी **चित्र उपलब्ध नहीं**	छीतस्वामी के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9B%E0%A5%80%E0%A4%A4%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%AE%E0%A5%80

निर्गुण काव्यधारा की भी दो शाखाएं है - ज्ञान मार्गी और प्रेममार्गी. ज्ञान मार्गी धड़े के संत कवि का नेतृत्व कबीरदास के हाथों में, जिनमें दादूदयाल, रैदास, आदि शामिल थे. ये संत कवि समाज के हाशिए वाले वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहे थे और निर्गुण, निराकार ब्रह्म के उपासक थे. कहते हैं, इन्हें भक्ति की प्रेरणा रामानंद से मिली. इन संत कवियों ने अक्षर ज्ञान से नहीं बल्कि अपनी वाणियों से लोगों में जागृति की चेतना जगाई. लोक प्रसिद्धि में ये किसी भांति सगुणोपासक कवियों से कमतर नहीं. निर्गुण पंथ की प्रेममार्गी धारा का संबंध सूफियों से जुड़ता है. सूफी कवियों की विशेषता इस बात में है कि ये सभी मुस्लिम होने के बावजूद हिन्दू घरों में प्रचलित कहानियों को अपने काव्य का आधार बना रहे थे. ये कवि तत्कालीन विपरीत राजनीति-सांस्कृतिक-सामाजिक माहौल में अपने काव्य सृजन से राम रहीम की एकता स्थापित कर रहे थे. (देखें, त्रिवेणी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ.15). इन कवियों में मलिक मुहम्मद जायसी(पद्मावत), कुतुबन(मृगावती), मंझन(मधुमालती), मुल्ला दाउद(चंदायन), उस्मान(चित्रावली), कासिम शाह(हँस जवाहिर), नूर मुहम्मद(इन्द्रावती और अनुराग बाँसुरी) आदि प्रमुख हैं. इनमें जायसी को तो आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रथम श्रेणी के कवि के रूप में स्थापित किया है.

चतुर्भुजदास **चित्र उपलब्ध नहीं**	चतुर्भुजदास के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%9C%E0%A4%BE%E0%A4%AF%E0%A4%B8%E0%A5%80
कुतुबन 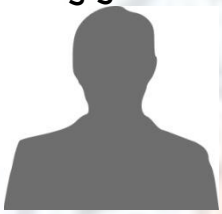 **चित्र उपलब्ध नहीं**	कुतुबन के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%95%E0%A5%81%E0%A4%A4%E0%A5%81%E0%A4%AC%E0%A4%A8
मंझन **चित्र उपलब्ध नहीं**	मंझन के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%AE%E0%A4%82%E0%A4%9D%E0%A4%A8
मुल्ला दाउद **चित्र उपलब्ध नहीं**	मुल्ला दाउद के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/w/index.php?title=%E0%A4%B5%E0%A4%BF%E0%A4%B6%E0%A5%87%E0%A4%B7%3ASearch&search=%E0%A4%AE%E0%A5%81%E0%A4%B2%E0%A5%8D%E0%A4%B2%E0%A4%BE+%E0%A4%A6%E0%A4%BE%E0%A4%89%E0%A4%A6&devnagri=on&fulltext=1
नूर मुहम्मद **चित्र उपलब्ध नहीं**	नूर मुहम्मद के बारे में अधिक जानकारी के लिए यहाँ क्लिक करें - http://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%A8%E0%A5%82%E0%A4%B0_%E0%A4%AE%E0%A5%81%E0%A4%B9%E0%A4%AE%E0%A5%8D%E0%A4%AE%E0%A4%A6

भक्ति साहित्य में भले ही निर्गुण-सगुण का भेद चला हो पर मध्ययुगीन कवियों ने इस भेद की खाई को उस तरह से नहीं बढ़ने दिया कि इनके मानने वालों में वैमनष्य हो. इन सभी में मानुस धर्म ही वैकुंठ सरीखा था. तुलसीदस ने कहा भी कि *'अगुनहि सगुनहि नहीं कछु भेदा'* तो सूरदास कहते हैं *'वेद उपनिषद जासु को निर्गुनहिं बतावैं, भक्त बछल भगवान धरे, तन भक्तनि के पास'* वहीं कबीर कहते हैं *'संतौं, धोखा कासूं कहिये, गुण मैं निरगुण, निरगुण मैं गुण, बाट छांडी क्यों बहिए',* पर भक्ति, उपासना में तात्विक भेद साकार और निराकार का तो था ही. भक्ति आंदोलन और काव्य की समग्रता परंपरा की अखंडता में है. सगुणोपासक और निर्गुण उपासक दोनों में एक धागा प्रेम का हमेशा जुदा हुआ दिखता है. कबीरदास को अक्षर ज्ञान नहीं था लेकिन वे शब्द साधना के महत्त्व को स्वीकारते हैं *'शब्द बेद पुराण कहत है, शब्दै सब ठहरावैं'*, वही तुलसीदास सगुण भक्त कवि होने के बावजूद ज्ञान की महिमा को मानते हैं *'नहिं कछु दुर्लभ ज्ञान समाना'*.निराकार ब्रह्म का सगुण भक्तों पर जिस तरह का प्रभाव है *'अगुन सगुण द्वयी ब्रह्म स्वरुपा, अकथ अगाध अनादि अनूप'*, उसी तरह अवतारवाद का असर निर्गुण संतों पर भी है.' अजामल गज गणित पतित करम कीन्हा, तेऊ उतर पार गए राम नाम लीन्हा'. कृष्ण भक्त मीरां एक निर्गुण संत को अपना गुरु बनाती हैं. दरअसल यह आन्दोलन सभी भाषाओं, वर्गों, वर्णों के समानता और ज्ञान, भक्ति के रास्ते अखिल भारतीय संवाद स्थापित करने का प्रयास है, जिसमें सभी की समान भागीदारी रही और सच्चे अर्थों में यह लोक धर्म का आन्दोलन रहा, जहाँ ईश्वरीय धर्म के साथ इंसानी मूल्य सर्वोपरि था.

भक्ति आन्दोलन का धार्मिक पक्ष :

भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में एक सवाल बार-बार आता है कि भक्ति आंदोलन धर्म के आवरण में क्यों आया ? इसकी अनेक व्याख्याएं हैं. कार्ल मार्क्स का कथन हैं - *"धर्म पीड़ित आदमी की कराह है, हृदयहीन जगत का हृदय है. यह आत्महीन परिस्थितियों की आत्मा है."(देखें - भारतीय चिंतन परंपरा, के. दामोदरन, पृ.327)*. धर्म के इसी गुण और असर को देखते हुए मार्क्स ने इसे 'अफीम' भी कहा. यानि जिसका आश्रय पाकर जनता अपने समस्त दु:खों से कुछ समय के लिए निजात पा लेती है. धर्म जीवन के अभाव में भाव भरती है. यदि हम मार्क्स की ही इस धारणा को गहरे देखें, तो पाएंगे कि धर्म पीड़ा की अभिव्यक्ति का जरिया बनकर सामने आया, और भक्ति आन्दोलन का काव्य लोकहित, लोकोत्थान, लोकचिंता का काव्य है. संस्कार हमारे

अवचेतन में विराजमान होता है और इससे जुड़ी शक्तियां हमारे हृदय और मन-मस्तिष्क पर अपना असर डालती हैं. इसी स्थिति में धर्म एक सामाजिक संस्कार के रूप में कार्य करता है. हम जानते हैं कि धर्म मूल्यों का समुच्चय होता है. इसलिए किसी भी राष्ट्र अथवा समुदाय विशेष पर बाह्य आक्रान्ता उनके इसी स्वरुप से खिलवाड़ करने का प्रयास करते हैं. मध्य युग में यह बहुत स्वाभाविक बात थी. इस समय भारतवर्ष पर लगातार बाह्य जातियों ने हमले किये थे. यह अलग बात है कि बाद में ये सभी हमारी सामासिक संस्कृति के अभिन्न अंग बन गए और आज यही हमारी सबसे बड़ी पहचान है. बहरहाल, बाह्य आक्रान्ताओं के इन प्रयासों से ही सामूहिक उपासना पद्धति के द्वारा समुदाय विशेष ने सांस्कृतिक मूल्यों को जीवंत रखने का प्रयास किया, इसका सबसे बड़ा उदाहरण आचार्य रामचंद्र शुक्ल की वह टिप्पणी है, जहाँ उन्होंने यह स्थापना दी थी कि अपने पौरूष से हताश जाति के पास भगवद भजन के सिवा कोई चारा नहीं था. तो धर्म भक्ति आन्दोलन का एक एक अनिवार्य पक्ष बना, जो स्वाभाविक ही था. वैसे भी, *"धर्म दर्शन ने मध्य युग में विचारधारा की अन्य शाखाओं दर्शन, विधिशास्त्र, राजनीतिक आदि को आत्मसात कर लिया था. विचारधारा की ये शाखाएं उसकी उपशाखाएँ बन गयी थी. इसलिए उसने हर राजनीतिक, सामाजिक आन्दोलन को धर्म का जामा पहनने के लिए विवश किया. उसने सामान्य जनता को धर्म का चारा देकर और सब बातों से अलग रखा. यही कारण है कि मध्य युग में हर राजनीतिक सामजिक आंदोलन को धर्म का जामा पहनने को विवश होना पड़ा."(देखें - फ्रेडरिक एंजेल्स का कथन, भारतीय चिंतन परंपरा, के. दामोदरन, पृ. 328)* इसलिए मध्यकालीन परिस्थितियों और इतिहासकारों के कथनों के आलोक में देखें कि भक्ति आंदोलन धर्म का आवरण लेकर सामने आया तो कोई बहुत आश्चर्य की बात नहीं है. क्योंकि बहुसंख्यक जनता तक अपनी बात संप्रेषित करने के लिए धर्म ही सहज आधार हो सकता था, हुआ भी. जहाँ तक भक्ति आन्दोलन के उदय संबंधी मत-वैभिन्य की स्थिति है, तो इसमें दो राय नहीं कि दक्षिण से उपजे इस लोक जागरण की इस प्रगतिशील धारा का प्रभाव क्षेत्र सम्पूर्ण भारत में था और यह उत्तरोत्तर चहुँ ओर फैलती ही गयी, लोकचिंता और लोकमंगल इसके मूल में रहा.

उपसंहार :

भक्ति आन्दोलन के उदय संबंधी विभिन्न मतों के विश्लेषण के पश्चात् हम पाते हैं कि यह आन्दोलन एक व्यापक सांस्कृतिक घटना थी. इस सांस्कृतिक घटना के उदय संबंधी मत बहुसूत्रीय हैं. इसमें दो राय नहीं कि भक्ति आन्दोलन के उद्भव के सूत्र दक्षिण से प्राप्त होते हैं

और यह एक ऐतिहासिक विकास-क्रम में उत्तर की ओर अग्रसर हुआ. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जिसे पराजित, हतोत्साहित जाति का साहित्य कहा है उसे भी पूर्णतया नकारा नहीं जा सकता. आचार्य शुक्ल के इस मत को उत्तर भारतीय नजरिये से देखना आवश्यक है. यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है कि इस युग में उत्तर भारत में मुस्लिम शासक आये दिन मूर्तियों और मंदिरों को ध्वस्त कर रहे थे, जिसके प्रतिक्रिया स्वरुप बहुसंख्यक हिन्दू जाति का झुकाव भक्ति और भगवद भजन की ओर हुआ, यह स्वाभाविक ही था. पर यह भी उतनी ही बड़ी सच्चाई है कि इस युग में सूफी कवियों ने, जो बहुधा मुस्लिम ही थे, हिन्दू घरों की लोक प्रचलित कथा को अपने काव्य का आधार बनाया. संतों और सूफियों की उदार एवं सहिष्णु भावना ने हिन्दू और मुस्लिमों में सांस्कृतिक-सामाजिक सद्भाव का संचार मिला. यह भक्ति आन्दोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि है. जहाँ तक भक्ति आन्दोलन के उदय संबंधी मतों की है तो रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं *"ग्रियर्सन, रामचंद्र शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी भक्ति के उदय की व्याख्या तीन भिन्न रूपों में करते हैं. ग्रियर्सन के लिए वह एक बाह्य प्रभाव है, रामचंद्र शुक्ल के लिए वह बाहरी आक्रमण की प्रतिक्रिया है, और हजारीप्रसाद द्विवेदी उसे महज भारतीय परपरा का अपना स्वतःस्फूर्त विकास मानते हैं."* चतुर्वेदी जी आगे लिखते हैं *"ये क्रमशः विदेशी, देशी और लोक-पक्ष को महत्त्व देने की अलग-अलग परिणतियाँ हैं. ग्रियर्सन की ईसाई प्रभाव वाली धारणा अब बहुत विचारणीय नहीं रह गयी है. हाँ. रामचंद्र शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी की व्याख्याओं में दृष्टिगत अंतर ध्यान देने योग्य है."(देखें, चतुर्वेदी, रामस्वरूप, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ.30).* भक्ति आंदोलन भारतीय जनता के लिए सामाजिक चेतना का नवोन्मेष है. यह धर्म और मानवता के एक नए संकल्प के रूप में आया. भक्ति काव्य उसी नवोन्मेष की उपज है. इतिहास में उसकी जड़ें दूर-दूर तक फैली हुई हैं.

भक्ति काव्य इस मायने में अनूठा है कि उसमें अपने समय की राजनीति और संस्कृति के दस्तावेज प्रत्यक्ष हैं. एक ओर जहाँ उसमें तत्कालीन सच्चाईयां हैं, तो दूसरी और उनकी आलोचना भी. कबीर को ही देखिये, जो उस समय के शासक वर्ग लोदियों से टकराते हैं, साथ ही मौलवी-मुल्ला-पंडितों की भी खबर लेते हैं. यह आन्दोलन लोक चेतना का आन्दोलन है, जिसमें शास्त्रीय रूढ़ियों और बनी-बनायी परिपाटी, व्यवस्था से विरोध है. भक्ति काव्य का प्रयोजन लीलागान करना मात्र नहीं था. इसमें गैर बराबरी और 'सुरसरी सब कर हित होई' का भाव सन्निहित था.

सच कहा जाये तो, भक्ति आन्दोलन दक्षिण से उपजा और अपनी सर्वग्राह्य प्रवृति के कारण पूरे देश में फ़ैल गया. यदि इसमें दक्षिण के आचार्यों की वैचारिकता या दर्शन की आग है, तो उत्तर के संतों और भक्तों का भावावेग भी. इसलिए भक्ति काव्य को अखिल भारतीय जातीय काव्य कहा जाता है. यह किसी वर्ग, समुदाय, संप्रदाय आदि के हितों के लिए नहीं वरन उस आन्दोलन की उपज है, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिख, जुलाहे, दस्तकार, किसान और अन्य कामगार जातियाँ शामिल हैं. यह एक साथ ही, राज्यसत्ता और सामंतवाद, पुरोहितवाद से टकराता है. भक्ति आन्दोलन में समाज के सभी वर्गों की सामूहिक संवेदनाओं का सार निहित है, इसलिए यह अपने मूल में ही सबसे अधिक प्रगतिशील और मानवीय है. यह आन्दोलन भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का स्वतःस्फूर्त विकास अवश्य है, परन्तु इसके ऐतिहासिक प्रभावों को अनदेखा नहीं किया जा सकता. इतना ही नहीं, भक्ति आन्दोलन के उदय संबंधी व्याख्याओं में आंशिक सत्यता तो है ही, किसी भी तर्क को पूरी तरह खारिज नहीं किया जा सकता. इतना तो सिद्ध है कि यह आन्दोलन जनता की चित्तवृतियों और अपने समय के विविध पक्षों से उपजा हुआ आंदोलन है और मानवतावाद की स्थापना इसका उद्देश्य.

स्व-मूल्यांकन प्रश्नमाला :

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. ‘अपने पौरूष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था’- किसका कथन है ?
   (क.) आचार्य रामचंद्र शुक्ल
   (ख.) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
   (ग.) जॉर्ज ग्रियर्सन
   (घ.) बाबु गुलाब राय

   सही उत्तर - (क)

2. ‘अगर इस्लाम नहीं आया होता तो भी भक्ति साहित्य का बारह आना वैसा ही होता जैसा आज है’ - किसका कथन है?
   (क.) आचार्य रामचंद्र शुक्ल

(ख.) के. दामोदरन

(ग.) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

(घ.) रामस्वरूप चतुर्वेदी

सही उत्तर - (ग)

3. "भक्ति आन्दोलन उस समय आरम्भ हुआ था, जब हिन्दू और मुसलमान पुरोहितों और उनके द्वारा समर्पित और समृद्ध किये गए निहित स्वार्थों के खिलाफ संघर्ष एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गया था" - किसका कथन है?

(क.) के. दामोदरन

(ख.) जॉर्ज ग्रियर्सन

(ग.) बच्चन सिंह

(घ.) नामवर सिंह

सही उत्तर - (क)

4. इनमें से एक इतिहास ग्रंथ डॉ. नगेन्द्र द्वारा सम्पादित है.

(क.) हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास

(ख.) हिंदी साहित्य का आदिकाल

(ग.) हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास

(घ.) हिंदी साहित्य का इतिहास

सही उत्तर - (घ)

5. 'हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास' पुस्तक के लेखक हैं-

(क.) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

(ख.) आचार्य रामचंद्र शुक्ल

(ग.) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

(घ.) के. दामोदरन

सही उत्तर - (क)

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल की भक्ति आन्दोलन के उदय संबंधी मत पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये.
2. भक्ति आन्दोलन आलवार संतो के यहाँ से उपजा हुआ आन्दोलन था - इस तर्क से आप कहाँ तक सहमत हैं?
3. भक्ति आन्दोलन का मूल ध्येय ज्ञान और भक्ति में तादात्म्य स्थापित करना था - विचार कीजिये.
4. भक्ति आन्दोलन लोक जागरण का आन्दोलन भी है - तर्कसंगत उत्तर दीजिये.
5. भक्ति आन्दोलन तात्कालिक प्रतिक्रिया का परिणाम नहीं था - विचार कीजिये.
6. भक्ति आन्दोलन अखिल भारतीय आंदोलन था - विचार कीजिये.

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. भक्ति आन्दोलन के उदय संबंधी विविध मतों की समीक्षा कीजिये.
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के भक्ति आन्दोलन स्थापनाओं का तुलनात्मक अध्ययन कीजिये.
3. भक्ति आन्दोलन अपने मूल चरित्र में अधिक प्रगतिशील था - विचार कीजिये.
4. भक्ति साहित्य 'हतदर्प पराजित जाति का साहित्य' नहीं था - तर्कपूर्ण उत्तर दीजिये.
5. भक्ति आन्दोलन की समूची विकास प्रक्रिया के मूल में लोक केंद्र में है - युक्तियुक्त उत्तर दीजिये.

संदर्भ ग्रंथ-सूची :

1. हिंदी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल
2. भारतीय चिंतन परंपरा - के. दामोदरन.
3. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी
4. भक्ति आन्दोलन और सूर का काव्य - मैनेजर पाण्डेय
5. हिंदी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र
6. हिंदी साहित्य की भूमिका - हजारी प्रसाद द्विवेदी

7. भक्ति आन्दोलन और भक्ति काव्य - शिव कुमार मिश्र
8. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास - बच्चन सिंह
9. हिंदी साहित्य का इतिहास : पुनर्लेखन की समस्याएँ -सं० श्याम कश्यप